Con. 3. VII. 35. 49
250

अंक 7
संख्या 35

शुक्रवार,
7 जनवरी
सन् 1949 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

विधान का मसौदा-(जारी)..... 2357-2386
[अनुच्छेद 149, 63, 64 तथा 65 पर विचार]

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 7 जनवरी, सन् 1949 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातःकाल 10 बजे उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुकर्जी) के सभापतित्व में आरम्भ हुई।

अनुच्छेद 149—(जारी)

विधान का मसौदा—(जारी)

***उपाध्यक्ष** (डॉ. एच.सी. मुकर्जी): अब हम अनुच्छेद 149 पर और आगे वाद-विवाद करेंगे।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 149 पर व्यापक वाद-विवाद हो रहा है। उप-खण्ड (3) बहुत महत्त्वपूर्ण है। श्री कृष्णमाचारी ने प्रतिनिधित्व माप को घटा कर 75,000 पर एक प्रतिनिधि कर देने के उद्देश्य से दो संशोधन पेश किये हैं। खण्ड में यह माप रखा गया है कि प्रत्येक लाख की आबादी पर एक प्रतिनिधि हो, और आगे चल कर परादिक में सदस्यों की संख्या की सीमा अधिकतम 300 रख दी गई है। यदि श्री कृष्णमाचारी के संशोधन को स्वीकार कर लिया गया तो उसका यह प्रभाव होगा कि 75,000 की आबादी पर एक से अधिक प्रतिनिधि नहीं लिया जायेगा, और सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या 500 होगी। निश्चयात्मक रीति से यह नहीं कहा जा सकता कि किसी विधान-मण्डल की सदस्य संख्या में वृद्धि करने से उसकी कार्यकुशलता बढ़ जाती है या नहीं। किन्तु संयुक्तप्रांत और मद्रास जैसे कुछ बड़े प्रान्तों ने इच्छा प्रकट की है कि संख्या में ऐसी वृद्धि की जाये और सम्भवतः यह ठीक होगा कि हम उनकी बात को मान लें पर साथ ही मैं इस बात पर ज़ोर दूंगा कि हमारे लिये यह आवश्यक न होना चाहिये कि हम उतने सब स्थान भर ही दें जितने कि अधिकतम संख्या में निर्दिष्ट हों।

---

*इस संकेत का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एल. कृष्णास्वामी भारती]

श्रीमान्, अमरीका में, यद्यपि प्रतिनिधि-मान इस प्रकार निश्चित किया गया है कि 30,000 के पीछे एक प्रतिनिधि हो, किन्तु मुझे पता लगा है कि वास्तव में यह इससे दस गुनी संख्या के पीछे एक प्रतिनिधि होता है। यदि 30,000 के पीछे एक प्रतिनिधि निर्वाचित होता, तो सीनेट में लगभग 4,000 सदस्य हो जाते, किन्तु वास्तव में वहां प्रतिनिधि इससे बहुत कम हैं, और इसलिये यह बात याद रखनी चाहिये कि यद्यपि अधिकतम संख्या क्या हो, यह निर्धारित कर दिया गया है। वास्तव में सदस्य संख्या क्या हो, यह निश्चित करना प्रान्तीय विधान-मण्डलों का ही काम है। कुछ माननीय सदस्यों ने यह बात कही है कि यदि बाद में कोई राज्य भारतीय संघ में प्रवेश करे या विलीन हो तो उसके लिये कुछ और प्रतिनिधि बढ़ाये जा सकें ऐसा कोई प्रावधान होना चाहिये। किन्तु इस सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि यह कोई बुद्धिमानी की बात नहीं कि अधिकतम संख्या के अनुसार सब स्थानों को भर कर और स्थानों की मांग की जाये। इससे अधिक बुद्धिमानी का तरीका तो यह है कि आरम्भ में इस संख्या को कम कर दिया जाये—मान लीजिये 450 कर दिया जाये—और बाद में सभा के निर्माण के पश्चात् यदि कुछ राज्य विलीन हों, तो उनके लिये अतिरिक्त स्थानों का प्रावधान कर दिया जाये। इस खण्ड में और नये परादिक जोड़ने के स्थान पर यह तरीका अधिक अच्छा होगा।

कल श्री कृष्णमाचारी ने कहा था कि संख्या को कम करके 75,000 करने के विचार के पीछे यह प्रयोजन है कि पिछड़े हुए क्षेत्रों के लिये व्यवस्था की जाये, अर्थात् जिससे पिछड़े हुए क्षेत्रों में अनुपात कुछ कम हो जाये; अर्थात् उन क्षेत्रों में प्रत्येक 75,000 लोगों के लिये एक प्रतिनिधि होगा, जब कि अन्य क्षेत्रों में इससे अधिक संख्या के लिये एक प्रतिनिधि होगा। यद्यपि इस विचार से मेरी पूरी सहानुभूति है पर मेरा ख्याल है, श्रीमान्, कि हमें ऐसी कोई गुंजाइश नहीं छोड़नी चाहिये जिससे कि बाद में निर्वाचन-क्षेत्रों के पुनर्निर्माण आदि के नाम से गड़बड़ की जा सके। हमने अनुच्छेद 67 में ऐसा ही प्रावधान रखा है जिसमें हमने कहा है कि भारत भर में प्रतिनिधान का मान एक-सा हो। श्रीमान्, मेरी यह प्रबल इच्छा है कि एक प्रान्त के भीतर ही जहां तक व्यवहार्य हो, प्रतिनिधित्व के माप में एकरूपता हो, अर्थात् किसी निर्वाचन-क्षेत्र विशेष में कुल जनसंख्या और प्रतिनिधियों की संख्या का अनुपात, जहां तक व्यवहार्य हो, प्रत्येक राज्य विशेष या प्रान्त विशेष में सब स्थानों पर एक-सा हो। गणित के समान एकरूपता लाना

तो पूर्णतः सम्भव नहीं है। हम प्रत्येक स्थान पर 82,824 नहीं रख सकते यह तो लाज़मी है कि कुछ विभिन्नता होगी ही, किन्तु विभिन्नता अधिक नहीं होनी चाहिये; एक निर्वाचन-क्षेत्र में 75,000 हो और दूसरे में दो लाख, ऐसा होना कदापि ठीक नहीं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास : जनरल): दो लाख नहीं, वरन् डेढ़ लाख।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** यहां डेढ़ लाख नहीं है। प्रतिनिधित्व के एकविध माप के सिद्धान्त को स्वीकार किया जाना चाहिये। जहां तक व्यवहार्य हो, एकरूपता होनी चाहिये। श्रीमान्, यदि यह मान लिया जाये कि प्रतिनिधियों की अधिकतम संख्या 500 होगी तो उन आंकड़ों के बल पर जो मेरे पास हैं मैं यह कह सकता हूं कि संयुक्तप्रान्त में फी 1 लाख दस हज़ार के लिये एक प्रतिनिधि होगा, जबकि मद्रास में, यदि पूरे के पूरे 500 स्थान भर दिये जायें—और ऐसा होने की कोई सम्भावना मुझे प्रतीत नहीं होती—तो औसतन प्रति 98,682 निर्वाचकों के लिये एक प्रतिनिधि होगा। यदि प्रतिनिधियों की संख्या को घटा दिया जाये, तो यह औसत बढ़ जायेगा। मेरे विचार में यद्यपि 75,000 का माप रखा गया है, किन्तु मद्रास और संयुक्तप्रान्त दोनों इससे लाभ नहीं उठा सकते, क्योंकि यदि वे 75,000 रखें, तो प्रतिनिधि संख्या अधिकतम से भी बढ़ जायेगी, अतः संयुक्तप्रान्त में एक लाख 10 हज़ार लोगों के पीछे एक प्रतिनिधि होगा तथा मद्रास में 98,682 के पीछे एक।

श्रीमान्, निःसंदेह श्री कृष्णमाचारी ने कहा था कि इसका उद्देश्य कुछ पिछड़े हुए क्षेत्रों के लिये व्यवस्था करना है। मुझे भय है कि इस सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए, जिसकी मैंने चर्चा की है, इसे विधान में नहीं रखा जा सकता।

इस सम्बन्ध में मुझे परिषद् को कई महत्त्वपूर्ण बातों की सूचना देनी है। मद्रास एक मिश्रित प्रान्त है, जिसमें चार भाषाभाषी क्षेत्र—आन्ध्र, तमिल, मलाबार और कन्नड़ हैं। श्रीमान्, आन्ध्र में 5 ज़िले ऐसे हैं जो रायलसीमा कहलाते हैं; वे वास्तव में पिछड़े हुए हैं, जिन्हें हर प्रकार का प्रोत्साहन मिलना चाहिये। आन्ध्र के दोनों भागों में इस विषय में एक प्रकार का कुछ समझौता हो गया है। रायलसीमा में पांच ज़िले हैं—बेलारी, कडप्पा, अनंतापुर, करनूल और चित्तूर। इसके अतिरिक्त दूसरे भाग में, जो तटवर्त्ती ज़िलों के नाम से ख्यात हैं, पांच-छः ज़िले हैं–विजिगापटम, पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, किशना, गन्टूर और नैलोर। सन् 1937 में इन दोनों भागों के बीच एक प्रकार का समझौता सा हो गया था जिसके अनुसार

[श्री एल. कृष्णास्वामी भारती]

रायलसीमा को, जो एक दुर्भिक्ष-पीड़ित क्षेत्र है, ज़िलों के आधार पर समान प्रतिनिधित्व मिलेगा। श्रीमान्, मैं यह बता दूं कि इन ज़िलों में जनसंख्या कम है और यह उचित ही था कि उन्होंने वज़न की मांग की और एक प्रकार का समझौता कर लिया। भाषावार-प्रान्त-कमीशन की रिपोर्ट से हमें पता चलता है कि दोनों भागों ने इसको अन्तिम रूप से स्वीकार नहीं किया हैं। मैं इस प्रश्न के विस्तार में नहीं जाना चाहता। मैं तो केवल यही निवेदन कर रहा हूं कि इन पिछड़े हुए क्षेत्रों के लिये व्यवस्था करने के उद्देश्य से ही यह सीमा कम कर दी गई है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं इस विषय पर कुछ नहीं कहता, यह तो आंध्र-भाषियों के परस्पर निर्णय करने का ही विषय है किन्तु जहां तक दूसरे क्षेत्रों का सम्बन्ध है, यदि इन पांच जिलों, रायलसीमा के दुर्भिक्ष-पीड़ित ज़िलों को 75,000 प्रति स्थान के आधार पर प्रतिनिधित्व दिया जाना उचित समझा जाये, और अन्य क्षेत्रों को दूसरे प्रकार से दिया गया तो उनका 1,07,000 की आबादी पर एक स्थान मिलेगा। मैंने कुछ आंकड़ों का हिसाब फैलाया है। उनसे पता चलेगा कि रायलसीमा को इस आधार पर 116 स्थान मिलेंगे, शेष आंध्र को 118, तमिलनाडु को 216, मलाबार को 36, और दक्षिण कन्नड़ को 14 स्थान मिलेंगे। प्रतिनिधित्व के इस माप के अनुसार संतुलन में सर्वथा उलट-पुलट हो जायेगी। अर्थात् आंध्र वर्ग को 234 स्थान मिलेंगे, जब कि तमिलनाडु को 216 स्थान मिलेंगे; आंध्र की जनसंख्या 2 करोड़ है, तमिल लोगों की 2 करोड़ तीस लाख है। अत: इन सब बातों से कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी। यह कठिनाई केवल इसी प्रान्त में नहीं है; मुझे पता लगा है कि अन्य प्रान्तों में भी ऐसी ही बात है। एक माननीय सदस्य मुझे बता रहे थे कि बम्बई में भी कुछ क्षेत्र हैं जो कि पिछड़े हुए हैं। यह भी सम्भव है कि अन्य पिछड़े हुए क्षेत्र भी हों। यदि हम इस प्रकार की चीज़ रखेंगे तो इससे बहुत कठिनाइयां उत्पन्न होंगी और यह बहुत अच्छी बात नहीं है कि हम इसे विधान में रखें। साथ ही हमारा यह सिद्धान्त होना चाहिये। यदि इसे रखा नहीं जा सकता, तो कम से कम हमें उपयुक्त प्राधिकारियों को सीमानिर्धारण समिति को सूचित कर देना चाहिये कि जहां तक व्यवहार्य हो, राज्य भर में एकरूपता होनी चाहिये। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है और इसलिये यद्यपि मुझे पिछड़े हुए क्षेत्रों से बहुत सहानुभूति है, किन्तु मैं प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): पूर्ववर्त्ती वक्ता के तर्क को समझना, वास्तव में कठिन है। हमारे प्रान्त में हमारी अपनी कठिनाइयां हैं। कुछ

कारणों से गत जनगणना ऐसे ढंग से हुई थी कि इससे यह पता नहीं चल सका कि वहां की ठीक जनसंख्या कितनी है। जनगणना में ऐसी गड़बड़ की गई थी कि सत्तारूढ़ दल ने अपनी इच्छानुसार आंकड़े बना लिये। वास्तव में कुछ जातियों की संख्या बढ़ा दी गई और आंकड़ों को इस प्रकार गढ़ा गया कि ठीक आबादी ही नहीं दर्ज की गई। प्रमुख जाति की संख्या इतनी घटा दी गई कि वह केवल 39.2 ही रह गई। हम देखते हैं कि वनजाति की संख्या बढ़ कर 29 प्रतिशत हो गई, मुसलमान लगभग 22 प्रतिशत हो गये और परिगणित जातियां लगभग 5 प्रतिशत हो गईं। यदि उचित प्रकार से जनगणना की जाये तो शायद प्रमुख जाति और बढ़ जायेगी। अत: आसाम में भी जनगणना अपेक्षित है। मैं श्री लक्ष्मीकांत मैत्र की इस बात का समर्थन करता हूं कि आसाम में नई जनगणना होनी चाहिये; अन्यथा प्रमुख जाति को बहुत गम्भीर और कठोर आघात पहुंचेगा।

यह आवश्यक है कि स्थान निश्चित करने में और विभिन्न जातियों में स्थानों का वितरण करने में हमें प्रत्येक के साथ न्याय करना चाहिये। पिछली जनगणना में आंकड़ों को इस प्रकार गढ़ा गया था कि आसाम में प्रमुख जाति अल्पसंख्यक बन गई और यदि तथाकथित अल्पसंख्यकों के लिये स्थान सुरक्षित कर दिये गये तो मेरे विचार में प्रमुख जाति और भी कम हो जायेगी और उन्हें विधान में कोई उचित स्थान नहीं मिलेगा। बात यह है कि प्रमुख जाति पिछली गणना में, जो कि सत्तारूढ़ दल द्वारा की गई थी, पहले ही हानि उठा चुकी है। यदि जनजातियों तथा अन्य लोगों के लिये, जिनकी अपेक्षित संख्या भी नहीं है, स्थान सुरक्षित रखे गये तो प्रमुख जाति के स्थान कम करने होंगे और बहुसंख्यक जाति घट कर ऐसी अल्पसंख्यक बन जायेगी कि उसकी रक्षा करनी होगी और उनके लिये स्थान सुरक्षित करने होंगे। अत: मैं परिषद् से प्रार्थना करता हूं कि वह आसाम में भी दुबारा जनगणना करने के प्रश्न पर विचार करे।

उसके अतिरिक्त, पूर्वी पाकिस्तान और पश्चिमी बंगाल से कुछ लोग निष्क्रमण करके आसाम चले गये हैं। कुछ विशेष परिगणित जातियां हैं और अन्य जातियों के सदस्य हैं जिनकी ठीक गणना होनी है। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो कुछ मास के लिये पूर्वी पाकिस्तान चले जाते हैं और फिर वहां से लौट आते हैं। हमें उन लोगों की संख्या का पता लगाना चाहिये जो चाय के बागों में और अन्य स्थानों में कुछ कमाई करने के उद्देश्य से चले जाते हैं। यदि इन बातों का पता लगाये बिना ही हम स्थानों का वितरण कर देंगे तो प्रमुख जाति और अन्य जातियों के साथ अन्याय हो जायेगा। मैं परिषद् से प्रार्थना करता हूं कि आसाम में ठीक जनगणना की जाये, और आसाम को जनगणना में सम्मिलित किया जाये, जिसके लिये श्री रोहिणी कुमार चौधरी ने एक संशोधन भेजा है।

***श्री एस. नागप्पा:** उपाध्यक्ष महोदय, यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है, विशेषत: रायलसीमा के प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण से तो यह और भी महत्त्वपूर्ण है मैं समझता हूं कि मूलभूत सिद्धान्त के अनुसार कोई पासंग यानी वज़न की मांग नहीं कर सकता किन्तु यह साम्प्रदायिक पासंग नहीं हैं। हम सामाजिक अथवा राजनैतिक रुप से पिछड़े हुए होने के आधार पर कुछ नहीं मांग रहे हैं, प्रत्युत यह क्षेत्र आर्थिक दृष्टिकोण से शताब्दियों और युगों से पिछड़ा हुआ है और इस कारण इस क्षेत्र को प्रतिनिधित्व देने से यह होगा कि इसके प्रतिनिधि यहां के निवासियों के उद्धार के लिये प्रयत्न करेंगे। इसी कारण रायलसीमा के लोग, विशेषत: आन्ध्र देशवर्त्ती लोग, 1937 में स्त्री बाग संधि नामक एक समझौते के लिये सहमत हो गये थे, जिसमें कहा गया था कि रायलसीमा और सरकार, प्रदेश वासियों के बीच प्रतिनिधित्व 6:5 के अनुपात से होगा। रायलसीमा में 5 ज़िले हैं और सरकार में 6 हैं और इन 11 जिलों में एक समझौता कर लिया है कि प्रतिनिधित्व 6:5 के अनुपात से होगा, यहां तक कि मन्त्रिमण्डल में भी यही अनुपात रह चाहे जनसंख्या कुछ भी हो किन्तु यह समझौता एक ही प्रान्त के दो वर्गों में हुआ है।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती: मंत्रिमंडल में प्रतिनिधित्व किस अनुपात से हो यह बात समझौते में नहीं है।

***श्री एस. नागप्पा:** हम इस प्रतिनिधित्व की मांग तमिलनाडु से नहीं कर रहे हैं। विधान में प्रावहित सिद्धान्तों के अनुसार मद्रास प्रान्त को प्रतिनिधित्व दिया जायेगा, और उसमें से आंध्र को भी भाग मिलेगा। आन्ध्र के इस भाग में से रायलसीमा और सरकार के हम लोग आपस में अपने समझौते के अनुसार स्थान बांट लेंगे। उदाहरणार्थ यदि सरकार को 1,25,000 के पीछे एक स्थान मिलता है तो रायलसीमा को 75,000 के पीछे एक स्थान मिल सकता है। इससे हमारी समस्या हल हो जाती है। यह हम इसलिये मांगते हैं कि रायलसीमा क्षेत्रफल में आंध्र देश का दो तिहाई है किन्तु उसकी जनसंख्या केवल एक तिहाई है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** यह सही नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** कृपया वक्ता के भाषण में बाधा मत डालिये।

***श्री एस. नागप्पा:** मेरे पास जो आंकड़े हैं यदि वे चाहें तो इनसे देख सकते हैं कि सरकार की जनसंख्या दो तिहाई है और रायलसीमा की लगभग एक तिहाई है, किन्तु रायलसीमा का क्षेत्रफल आंध्र देश का दो तिहाई है।

यह समझौता हम लोगों में हुआ था और मैं सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि वे ऐसी व्यवस्था करें कि इस समझौते को कार्यान्वित किया जा सके। मैं मोटे-मोटे सिद्धान्तों के अनुसार यह मांग नहीं करता; किन्तु हमारे क्षेत्र के आर्थिक और राजनैतिक रूप में पिछड़े होने के कारण हमें यह मांग करनी पड़ती है।

***प्रोफेसर एन.जी. रंगा** (मद्रास : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, हम सब इस सिद्धान्त के पक्ष में है कि जहां तक स्थानीय विधान-मण्डल में प्रतिनिधान के अनुपात का सम्बन्ध है, वहां तक यथासम्भव एक ही राज्य में विभिन्न निर्वाचन-मण्डलों के बीच कोई विभेद नहीं होना चाहिये। किन्तु साथ ही कई विशेष क्षेत्रों की कई विशेष आवश्यकतायें हैं जो कि साम्प्रदायिक, धार्मिक, राष्ट्रविरोधी अथवा अराष्ट्रीय विचारों पर आश्रित न होकर उन क्षेत्रों की सामाजिक अथवा आर्थिक स्थिति पर निर्भर हैं, जिनके विषय में कुछ विशेष प्रावधान करने ही होंगे ताकि राजनैतिक अथवा आर्थिक रूप में पिछड़े हुए अथवा अविकसित क्षेत्रों के लोग अपने पैरों पर खड़े हो सकें और उनमें तथा अधिक उन्नत लोगों के बीच जो अन्तर है वह कम हो सके। श्रीमान्, जैसे कि श्री नागप्पा ने अभी आपको बताया है, आंध्र देश के इन दो भागों के प्रतिनिधियों ने 1937 में बातचीत की थी और आपस में ही इस सम्बन्ध में मैत्रीपूर्ण निपटारा कर लिया था। मुझे उनकी जनसंख्याओं अथवा क्षेत्रफलों के विस्तृत विवरण देने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु यह सत्य है कि सरकार नामक क्षेत्र में घनी आबादी है और दूसरे क्षेत्र रायलसीमा में बहुत बिखरी आबादी है। सरकार आर्थिक रूप में भी कुछ अधिक आगे है और वहां रायलसीमा की अपेक्षा बहुत कम दुर्भिक्ष पड़ते हैं। अत: इन लोगों ने आपस में समझौता कर लिया है कि विभिन्न निर्वाचन-मण्डलों में एकविध प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर सरकार को जितने स्थानों का हक होगा, उसमें से वे कुछ अंश रायलसीमा को दे देंगे और उनके ज़िलों में जनसंख्या के आधार पर बांट देंगे। यह समझौता उस समय हुआ था जब कि प्रान्तीय कांग्रेस समिति के प्रधान डॉक्टर पट्टाभि थे जो आज अखिल भारतीय कांग्रेस के राष्ट्रपति हैं। आज मैं प्रान्तीय कांग्रेस समिति का सभापति हूं और मैं उस समझौते को पूरा करने के लिये वचनबद्ध हूं। समूची आंध्र जनता की यह इच्छा है कि इस समझौते को कार्यान्वित किया जाये और वर्तमान स्थिति के अंतर्गत वैधानिक और राजनैतिक रूप से जहां तक शक्य हो उसे पूरा किया जाये। इस पक्ष में या उस पक्ष में छोटे-छोटे परिवर्तन किये जा सकते हैं और दोनों सम्बद्ध दल इसके लिये पूर्णत: सहमत होंगे किन्तु इतना पासंग रायलसीमा को देने के लिये हम सब सहमत हैं। यह पासंग इस विधान की शर्तो के अनुसार कैसे दिया जा सकता है यह एक टेढ़ी समस्या है।

[प्रो. एन.जी. रंगा]

कुछ वर्षों से हम सब इसको लेकर बहुत चिंतित हैं और इस अनिश्चितता के कारण दोनों क्षेत्रों के सम्बन्धों में कुछ तनातनी आ गई है; क्योंकि रायलसीमा के प्रतिनिधि का ख्याल था कि बहुत सम्भव है कि स्त्रीवाद्य सन्धि के कार्यान्वित होने से यह परिषद् बाधक बन जाये। किन्तु अब इस परिषद् ने इस सिद्धान्त को सहमति दे दी है कि जहां तक केन्द्रीय विधान-मण्डल का सम्बन्ध है विभिन्न निर्वाचन-मण्डलों में जनता के प्रतिनिधित्व में जनसंख्या के आधार पर कुछ विभिन्नता आ सकती है और वह विभिन्नता 5,00,000 से 7,50,000 तक हो सकती है, अत: हमारे हृदयों में यह आशा उत्पन्न हो गई है कि यह सर्वथा सम्भव है कि सम्भवत: यह परिषद् इस बात के लिये सहमत हो जायेगी कि हम रायलसीमा और सरकार के निर्वाचन-क्षेत्रों में इसी प्रकार कर विभेद कर सकते हैं। हमारे लिये इस परिषद् से इतनी रियायत मांगना तीन कारणों से उचित ही है। एक कारण यह है कि जहां तक केन्द्रीय विधान-मण्डल का प्रश्न है यह विभेद पहले ही स्वीकार कर लिया गया है। दूसरा कारण यह है कि इन दोनों क्षेत्रों के सम्बद्ध लोग आंध्र देश में ही हैं और वे इसे पहले ही स्वीकार कर चुके हैं और इस विषय में किसी ने भी विरोध में कोई आवाज़ नहीं उठाई है। इसको स्वीकार करने से इन लोगों के बीच अधिक अच्छे सम्बन्धों का विकास होगा और उनक सम्पर्क बढ़ेगा और आखिर यह परिषद् किसी राज्य के विभिन्न वर्गों में अधिकाधिक सहयोग ही तो बढ़ाना चाहती है, केवल एकरूपता के किसी व्यर्थ सिद्धान्त पर अड़ना तो चाहती नहीं जिससे कि वह इधर या उधर टल ही न सके और इस देश के भीतर किसी एक क्षेत्र के लिये कोई विशेष प्रावधान ही न करे। तीसरी बात इस परिषद् ने आसाम के विषय में कुछ अपवाद करके विशेष मामलों में अपवाद करने की वांछनीयता को स्वीकार कर लिया है। आसाम के समक्ष भी जनजातियों के विषय में ऐसी ही कठिनाई पेश है। वहां तथाकथित स्वशासन प्राप्त जनजातीय क्षेत्रों के लिये इस विधान में कुछ विशेष प्रावधान रख दिये हैं जिससे कि उनके हितों का संरक्षण हो सके और जिससे कि निकट-भविष्य में उनकी प्रगति व्यवस्थानुसार और शीघ्रतापूर्वक अवश्य ही हो सके।

श्रीमान्, उपर्युक्त तीन कारणों से मैं परिषद् से अनुरोध करता हूं और उनसे अनुरोध करता हूं, जिन पर इस विधान क मसौदा तैयार करने की तथा हम जो परिवर्तन निश्चित करते हैं उनका मसौदा तैयार करने में हमारी सहायता करने की जिम्मेदारी है, कि वे आंध्र की इन विशेष आवश्यकताओं की विधान में व्यवस्था

करें और इस प्रकार रायलसीमा के विशेष हितों की रक्षा करने में और इन लोगों में अधिकाधिक एक्य लाने में हमारी मदद करें।

श्रीमान्, मुझे एक और बात कहनी है। हाल ही में जो भाषा समिति हमारे क्षेत्रों में आई थी उसके समक्ष जे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विचार उपस्थित किया गया था वह यह था। रायलसीमा के कुछ प्रतिनिधियों ने इस बात पर जोर दिया था कि आंध्र को यथाशीघ्र पृथक् प्रान्त बनाया जाये और स्त्री-वाद्य समझौते को, वर्तमान परिस्थितियों के अधीन जहां तक शक्य हो, इस प्रकार कार्यान्वित किया जाये कि इसे विधान-परिषद् तथा संसद् दोनों स्वीकार कर लें ताकि रायलसीमा के लोग भी अपने और सरकार वासियों के बीच के सभी विभेदों को दूर कर सकें। उनके संगठित होने में जो कठिनाइयां हैं यदि आप उन्हें दूर कर सकें, तो मैं आपको आश्वासन दे सकता हूं कि जहां तक इस क्षेत्र विशेष का सम्बन्ध है—और यह क्षेत्र अब भी विचारधारा की दृष्टि से शेष मद्रास प्रान्त अथवा राज्य से पृथक् है—केन्द्रीय सरकार के लिये यह सम्भव हो सकेगा कि वह आंध्र प्रान्त का निर्माण कर सके और उस काम में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, वैयक्तिक अथवा और कोई भी कठिनाई नहीं पड़ेगी। अतः मैं परिषद् से हार्दिक अनुरोध करता हूं कि इस क्षेत्र के सम्बन्ध में एक विशेष प्रावधान रखे। जैसे कि आसाम के विषय में विशेष प्रावधान रखने के लिये यह परिषद् सहमत हो गई है उसी तरह यहां भी वह अवश्य ही सहमत हो जाये।

धन्यवाद, श्रीमान्।

***श्री देशबन्धु गुप्त** (दिल्ली : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र पण्डित ठाकुरदास भार्गव, आगामी निर्वाचनों से पूर्व ही पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी बंगाल में जनगणना की जाये, इसके पक्ष में अपना तर्क उपस्थित कर चुके है। अतः उन्होंने कल जो युक्तियां पेश की हैं उन्हें दोहरा कर मैं परिषद् का समय लेना नहीं चाहता। मैं तो केवल यही कहना चाहता हूं कि दिल्ली भी उसी श्रेणी में आता है, जिसमें पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल हैं।

***पण्डित ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): मैंने उसके विषय में भी कहा था।

***श्री देशबन्धु गुप्तः** धन्यवाद। दिल्ली भी उसी श्रेणी में है, क्योंकि केवल यही बात नहीं है कि दिल्ली से बहुत से मुसलमान पाकिस्तान चले गये हैं, बल्कि दिल्ली पर उन लोगों का भी प्रभाव पड़ा है जो बहुत बड़ी संख्या में पाकिस्तान से यहां आ गये हैं और इस समय दिल्ली में रह रहे हैं। शायद दिल्ली ही ऐसा

[श्री देशबन्धु गुप्त]

शहर है जिसकी जनसंख्या आबादी की अदलाबदली के कारण दुगनी हो गई है। पिछली जनगणना के अनुसार दिल्ली की जनसंख्या लगभग नौ लाख थी, और अब यह विश्वास किया जाता है कि इस समय जनसंख्या 19 लाख के लगभग है; केवल शहर को लीजिये तो उसकी जनसंख्या लगभग 15 लाख है। अतः न्याययुक्त बात यही है कि जब इस प्रश्न पर विचार जाये तो दिल्ली के दावे की अवहेलना न की जाये और इसके साथ पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब के समान ही व्यवहार किया जाना चाहिये।

श्रीमान्, मुझे कुछ और नहीं कहना है, केवल इतना ही कहना है कि पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल को संतुष्ट करने के लिये उन क्षेत्रों की वर्तमान जनसंख्या का पता लगाने के लिये, जिन पर विभाजन का प्रभाव पड़ा है, जो भी आश्वासन दिये जायें और जो कुछ उपाय किये जायें, वही उपाय दिल्ली के विषय में काम में लाये जाने चाहियें।

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई** (आसाम : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं पण्डित ठाकुरदास भार्गव के संशोधन के सम्बन्ध में बोल रहा हूं जो पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल में जनगणना करने के सम्बन्ध में है। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि यद्यपि इस परिषद् में आसाम की जनसंख्या के विषय में कई बार चर्चा हो चुकी है, फिर भी आसाम के मामले पर पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल के मामलों के साथ विचार नहीं किया गया। श्री चलिहा ने अभी-अभी बताया है कि पिछली जनगणना के अन्तर्गत आसाम की जनसंख्या की क्या स्थिति है। 1941 में आसाम के विधान-मण्डल में कांग्रेस दल ने पिछली जनगणना का इस आधार पर कड़ा विरोध किया था कि वह वास्तव में आसाम की जनसंख्या की सच्ची तस्वीर नहीं है। अब विभाजन के समझौते से बहुत सी बातें काफी बदल गई हैं और उसके पश्चात् जो परिस्थितियां उत्पन्न हो गई हैं उनमें, सरकारी आंकड़ों के अनुसार, जो कि हमारे पास हैं, पूर्वी बंगाल से तीन-चार लाख आदमी उसी प्रकार शरणार्थी बन कर आ गये हैं, जैसे कि उधर.....

***उपाध्यक्षः** उधर खड़े हुए माननीय सदस्यों से मैं कहना चाहता हूं कि वे अपने-अपने स्थानों पर बैठ जायें।

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोईः** आसाम में लोग उसी प्रकार आ गये हैं जैसे कि पश्चिमी पंजाब से लोग पूर्वी पंजाब में आये हैं और पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल आये हैं। चार लाख कोई छोटी संख्या नहीं है और उनको

प्रतिनिधित्व से वंचित कर देना, मेरे ख्याल से एक जबरदस्त गलती होगी, और ऐसा करना बड़ा अन्याय होगा। अतः मेरा यह सुझाव है कि डॉक्टर अम्बेडकर कृपा करके आसाम को भी पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल की श्रेणी में सम्मिलित कर लें। यह संशोधन तो महज़ रस्म के तौर पर रखा गया है वरना मैंने जो बातें पेश की हैं वे परिषद् के समझ रखी जा चुकी हैं। मुझे तो केवल अपनी यह प्रार्थना दोहरानी है कि आसाम को भी पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल की श्रेणी में गिन लिया जाय। मैं समझता हूं कि पिछली जनगणना की विषमता पर तथा तब से अब तक के बीच आसाम में जो लोग आ गये हैं उनकी संख्या पर विचार किये बिना प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर कोई निर्णय करने का प्रयत्न करना एक ऐसी बात है जो सहन नहीं की जानी चाहिये। श्रीमान्, मैं सविनय निवेदन करता हूं कि पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल के साथ आसाम को भी सम्मिलित करने के मेरे सुझाव पर विचार किया जाये।

*__श्री कालुर सुब्बा राव__ (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं इस विषय पर कुछ कहना चाहता हूं क्योंकि रायलसीमा जिलों का मैं प्रतिनिधि हूं। यदि विधान-निर्माता इस अनुच्छेद में प्रत्येक स्थान के लिये अधिकतम तथा न्यूनतम जनसंख्या निश्चित कर देते, जैसा कि उन्होंने लोक-सभा में राज्यों के प्रतिनिधित्व के विषय में किया है, तो इस अवसर पर मेरा बोलना जरा भी अपेक्षित न होता। आपने अल्पतम संख्या 75,000 रख दी है, किन्तु कोई अधिकतम सीमा निश्चित नहीं की है। रायलसीमा के लोगों और आंध्र लोगों में केवल इसी के विषय में अन्तर है। सम्मिलित किये हुए जिले दुर्भिक्ष-पीड़ित जिले हैं और इतिहास के प्रारम्भ से ही इसी नाम से जाने जाते हैं। उनमें मुख्यतः पर्वतीय प्रदेश हैं। मैं ऐसे निर्वाचन-क्षेत्र अथवा तालुके का प्रतिनिधि हूं जिसका क्षेत्रफल अथवा आकार सबसे बड़ा है किन्तु उसकी जनसंख्या अल्पतम है। यदि आप प्रत्येक स्थान के लिये अल्पतम जनसंख्या 75,000 भी निश्चित कर दें, तब भी मेरे निर्वाचन-क्षेत्र के लोगों को अपना मतदान करने के लिये निकटतम मतदान स्थान को 15 मील चल कर जाना होगा। इसी कारण हम यह चाहते हैं कि जनसंख्या के आधार पर उन जिलों को अधिक प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये। और वे आर्थिक तथा राजनैतिक रूप में पिछड़े हुए हैं। इन ज़िलों की जनता की इस कमी को बहुत समय पूर्व ही स्वीकार कर लिया गया था और सरकार के तथा रायलसीमा के आंध्र लोगों के बीच एक समझौता हो गया था। इस समझौते से श्री भारती अथवा तमिलनाडु के लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हम केवल आंध्र क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व पर विचार कर रहे हैं और यह विचार कर रहे हैं आया कि इस

[श्री कालुर सुब्बा राव]

समझौते के अन्तर्गत रायलसीमा को अधिक मिलना चाहिये और सरकार को कम। इसी कारण हम परिषद् से प्रार्थना करते हैं कि अधिकतम सीमा के लिये प्रावधान कर दिया जाये, जिससे कि भावी राज्य में मैत्री और सद्भावना रहे। रायलसीमा के आंध्र प्रान्त के विरुद्ध होने का कोई प्रश्न नहीं है। किन्तु कठिनाई प्रतिनिधित्व की ही है। रायलसीमा की जनसंख्या 60 लाख है और सरकार प्रदेश की 1 करोड़ 25 लाख। मैं परिषद् से प्रार्थना करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार कर ले।

***डॉक्टर बी. पट्टाभि सीतारमय्या** (मद्रास : जनरल): उपाय्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मुझे इस वाद-विवाद में हस्तक्षेप करना पड़ रहा है जो कि कुछ विवादास्पद हो गया है। किन्तु मैं देश के उस भाग से जिस पर विवाद केन्द्रित हो गया है घनिष्ठ सम्बन्ध रखता हूं, अत: मैं अनुभव करता हूं कि यह बता देना मेरा कर्त्तव्य है कि इस विषय में हम लोगों के ठीक-ठीक विचार क्या हैं। इस विवाद में ऊपर से जो कुछ दिखाई देता है, इसकी तह में उससे अधिक कुछ है। जब भी कोई विवादास्पद प्रश्न उठता है तो हमारा यह मानसिक स्वभाव है कि हम दोनों पक्षों से कहते हैं कि 'आपस में बातचीत कर लीजिये, एक-दूसरे के पास बैठ कर एक-दूसरे को प्रेमपूर्ण सुतर्क से समझाइये और पंचनिर्णय या न्याय के लिये तीसरे के पास मत जाइये।' यह उच्च सिद्धान्त है। आंध्र लोगों ने इस उच्च सिद्धान्त के अनुसार कार्य किया है। वे भारत में हिन्दी-भाषियों के पश्चात् शेष सबसे बड़ी जाति हैं। निज़ाम के प्रदेश में हमारे 85 लाख भाई रहते हैं जिन्हें हम तब तक नहीं मिलाना चाहते जब तक कि वे मिलना न चाहें—इस विषय पर कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिये—उन्हें छोड़ कर भी हम लोग जो कुछ मिला कर लगभग 3 करोड़ हैं, मद्रास प्रान्त के उत्तरी भाग में ही लगभग 1 करोड़ 80 लाख हैं। मद्रास प्रान्त की राजधानी मद्रास है और वहां लगभग आधी जनसंख्या आंध्र है और शेष आधी आबादी से नगर का दक्षिणी भाग बना हैं। वे चार विभिन्न भाषाएं बोलते हैं। मद्रास के विधान-मण्डल में भाषाओं की खिचड़ी है। लोग एक- दूसरे की बात नहीं समझते। किन्तु यह एक पृथक् बात है।

श्रीमान्, हम पिछले 35 वर्षों से पृथक् प्रान्त की मांग करते आ रहे हैं। हमें कहा गया था कि जब तक राष्ट्रीय सरकार न बने तब तक चुप रहिये। यद्यपि अब राष्ट्रीय सरकार बन चुकी है, फिर भी यही दिखाई देता है कि आंध्र के विभाजन का दावा दूर ही दूर सरकता जा रहा है। चाहे कुछ भी हो, हमने आपस में कुछ समझौता सा कर लिया है।

जब मैं पहले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल के समय में आंध्र प्रान्तीय कांग्रेस समिति का प्रधान था—यह पद मुझ पर थोपा गया था—तब हमने सम्मिलित किये हुए ज़िलों अथवा रायलसीमा से कुछ सिद्धान्तों पर और बहुत अच्छे आधार पर एक समझौता कर लिया था। वह तो कुछ दे और कुछ ले का प्रश्न था। तटवर्त्ती जिलों के लोग, जो अधिक उन्नत हैं और जिन्हें सिंचाई के लिये डेल्टे से जल मिलता है, सब प्रकार से अधिक सम्पन्न हैं और वे रायलसीमा के लोगों से व्यापार, वाणिज्य, उद्योग में, शिक्षा और सार्वजनिक सेवाओं में बाजी मार लेते हैं, यद्यपि प्रान्त के दक्षिण भाग से तुलना की जाय तो समस्त आंध्र देश के लोग ही सामूहिक रूप से पिछड़े हुए हैं। आंध्र देश के दो भागों में तुलना की जाये तो तटवर्त्ती प्रदेश के लोग अत्यन्त उन्नत हैं तथा अन्य क्षेत्र अत्यन्त पिछड़े हुए हैं। इन दो भागों में भूमितल की अवस्थायें भी सर्वथा भिन्न हैं। हमारी ओर कुत्ते को मारने के लिये भी पत्थर नहीं मिलता और उनके प्रदेश में किसी भी काम के लिये मुट्ठी भर भी मिट्टी नहीं मिलती। वह प्रदेश पथरीला और पर्वतीय है और उसके तीन पंचमांश क्षेत्र में लगभग एक तिहाई जनसंख्या रहती है; और शेष प्रदेश में, जो क्षेत्रफल में दो पंचमांश है कुल जनसंख्या का दो तिहाई भाग रहता है। सांस्कृतिक, सामाजिक, व्यापारिक, औद्योगिक और आर्थिक उन्नति के अतिरिक्त भी यदि केवल संख्या पर ही विचार करें तो उनसे हम दुगने हैं और हमारी जनसंख्या प्रति वर्ग मील उनसे दुगनी है। जब ऐसी बात है, तो क्या यह मामला परिषद् के ध्यान देने योग्य नहीं है? क्या आप अपने सिद्धान्तों और नीतियों को सड़क कूटने के अंजन के समान ही लागू करना चाहते हैं जो कि लम्बे-लम्बे ताड़ के वृक्षों को भी छोटे-मोटे पौधों के बराबर कर देता है? यह तो वांछनीय नहीं है।

श्रीमान्, उस दिन आसाम का मामला परिषद् में पेश किया गया था और परिषद् ने कृपा करके कह दिया था कि 'अच्छा, हम आसाम के विषय में अपवाद रख देंगे'। हमारे वहां चार प्रकार के प्रदेश हैं अतः वहां कोई एक सिद्धान्त कड़ाई से लागू नहीं किया जा सकता। हम भारत के सारे प्रान्तों के लिये एक ही माप पर प्रतिनिधित्व लागू नहीं कर सकते। भारत एक वृहद् महाद्वीप है, जिसमें विभिन्न प्रकार की जलवायु और धरातल तथा भूतल हैं और समस्यायें सब जगह प्रायः विभिन्न हैं। अतः विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न सीमाओं तक प्रगति हुई है। अतः इन परिस्थितियों में प्रतिनिधित्व की जो प्रणाली तथा माप रखा जाये उसमें भी कुछ लोच होना चाहिये। और हम किस प्रकार के लोच के लिये मांग कर रहे हैं? वह केवल इतना ही है कि प्रतिनिधित्व के आधार को एक लाख तक ऊंचा मत रखिये। 75,000 की ही अल्पतम संख्या रखिये, जिससे कि आंध्रदेश

[डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमय्या]

के हल्की आबादी वाले क्षेत्रों को 90 स्थान मिल सकें। इससे उन्हें 90 स्थान मिल जायें और शेष प्रदेश के लिये आप एक लाख का माप रखिये तो हमें 120 स्थान मिल जायेंगे। इस उपाय से दोनों क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व की विषमता कम की जा सकती है और एक क्षेत्र के लोगों के लिये दूसरे क्षेत्र वालों के हितों की अवहेलना करना आसान न रहेगा।

अब दोनों क्षेत्रों के प्रशासन को लीजिये। यह शिकायत है कि देश के एक भाग पर उतना ध्यान नहीं दिया गया जितना ध्यान पाने का वह अधिकारी है, अत: वह पिछड़ी हुई हालत में रह गया। देश के उस भाग में पीने के लिये तालाब या कुएं का जल उपलब्ध नहीं है और वहां सदा दुर्भिक्ष का अखण्ड साम्राज्य रहता है। लगभग प्रत्येक तीसरे वर्ष उसे दुर्भिक्ष पीड़ित क्षेत्र घोषित करना पड़ जाता है और करोड़ों रुपये की लागत के उपाय करने होते है। यदि उन क्षेत्रों में जल की तथा अन्य सुविधायें समय पर उपलब्ध करने के उद्देश्य से रचनात्मक कार्य किया जाता तो वह बहुत सहायक सिद्ध होता। किन्तु उस प्रकार की कोई बात नहीं की जाती। उनकी कोई सुनता नहीं। जब आंध्र प्रान्त का निर्माण हो जायेगा तब उस क्षेत्र में काफी रकम व्यय करनी होगी। यह कोई सरल बात नहीं है। किन्तु फिर भी हमें उनकी सहायता करनी है जिससे कि उनके प्रतिनिधित्व को ऊंचे स्तर पर लाया जा सके। यदि राज्यों को समान प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता तो भारत को स्वशासन मिलने से क्या लाभ है? जब भारत की कोई एक इकाई किसी स्वेच्छाचारी नरेश के अधीन रही, तब तक मैंने भारत को कभी स्वतंत्र नहीं समझा। सौभाग्य से हमने उस स्थिति को पार कर लिया है। किसी प्रान्त को तब तक स्वतन्त्र समझने से क्या लाभ है जब तक कि इसका आधा भाग, वरन् दो तिहाई भाग पिछड़ा हुआ हो, उसके पास पीने के लिये जल न हो, खाने के लिय अन्न न हो और आर्थिक तथा शैक्षणिक दोनों प्रकार से वह दुर्बल हो? हम अपने देश के पर्वतीय क्षेत्रों को भी अपने स्तर पर लाना चाहते हैं चाहे उस दिशा में प्रगति धीमी ही हो। जब ऐसी बात है, तो ऐसा नियम बनाने से क्या लाभ है जिससे कि देश की प्रगति में बाधा पड़े? अत: मैं कहता हूं कि ऐसा-वैसा हल शायद सहायक सिद्ध न हो और इस विषय में मैं डॉक्टर अम्बेडकर से अनुरोध करना चाहता हूं जिन्होंने इस विधान के मसौदे को परिषद् में पारित करवाने के लिये इतना कष्ट उठाया हैं। वे सजग हैं, अच्छे तार्किक हैं और सुवक्ता हैं और इन विषयों पर उन्होंने विवेकपूर्ण निर्णय से काम लिया है। परसों हमने स्वीकार कर लिया है कि जनसंख्या के प्रत्येक 75,000 लोगों के लिये एक

स्थान होगा। दुर्भाग्य से कल शाम मुझे अमृतसर जाना पड़ा और मैं आज प्रातःकाल लौटा हूं। इसी बीच में यह संशोधन आ गया। यह संशोधन उस क्षेत्र के एक भाग के लिये कठिनाई खड़ी कर देगा। कहा जाता है कि यदि यह संशोधन नहीं रहता है तो पंजाब के साथ सख्ती होती है। अतः पंजाब के मामले पर विचार करना है, आसाम के मामले पर विचार करना है और आंध्र के मामले पर विचार करना है। इन सभी मामलों पर विचार करना है। अतः अपने नियमों को यथासम्भव लचीला बनाइये इन मामलों पर विस्तारपूर्वक ध्यान दीजिये और फिर उनके विषय में शान्ति से निर्णय करिये, जल्दी में नहीं। आखिर निर्वाचन-सूचियों के निर्माण के लिये यह सब विस्तार की बातें अपेक्षित नहीं होंगी, यद्यपि इन बातों के दे देने से उस कार्य में अत्यन्त सुविधा हो जायेगी। यदि सूचियां निश्चित करनी भी हैं तो यह काम मई या जून के मास में हो सकता है। हमें तो सूचियां तैयार करने की जल्दी है और सूचियों का आधार हमें ज्ञात होना चाहिये। हमने एक नियम पारित कर दिया है कि 21 वर्ष की आयु वाले नागरिक मतदाता हो सकते हैं। अतः प्रान्तीय सरकारें अपनी निर्वाचन सूचियां तैयार करने के काम को चालू रख सकती हैं, किन्तु यदि अन्य बातें अपेक्षित भी हों तो मैं कहता हूं, कृपया कुछ और समय ले लीजिये, और इस विषय पर अधिक विचार करके इसे कल पेश करिये, जिससे कि कोई ऐसा हल निकल आये जिस पर सब सहमत हों इसकी बजाय कि हम समस्त श्रोताओं को चक्कर में डालें जो कि इस विषय की सारी विस्तृत बातों को अथवा इसके परिणामों को वास्तव में समझ भी नहीं सकते। इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं कहूंगा। जब भी हम कोई प्रश्न उठाते हैं तो कह दिया जाता है, 'हूं, तमिल और आंध्र के लोग सहमत तो हो जायें तब'। जब हम सहमत हो जाते हैं तो आप यह कहते हैं 'समस्त आंध्र लोग सहमत हो जायें तब'। हम सभी आंध्रवासी सहमत होते हैं, तब आप कहते हैं, 'यह तो मेरे अनुभवसिद्ध नियम के अनुसार नहीं है'। ऐसी बात तो व्यर्थ है और ऐसा दिखाई पड़ता है कि इसका परिणाम यह होगा कि समस्या टल जायेगी। चाहे फिर आपका यह इरादा न हो। यदि अधिक उन्नत लोग कहते हैं कि 'हम प्रत्येक 75,000 अथवा एक लाख लोगों के पीछे एक स्थान नहीं चाहते; हम दो लाख के लिये एक स्थान चाहते हैं; हम आपको अपने बराबर की स्थिति में लाना चाहते है', तो क्या यह आपकी न्यायभावना के विरुद्ध है? क्या यह आपके राजनैतिक सिद्धान्तों अथवा प्रशासकीय नीति के विपरीत है? मैं इसे समझ नहीं पाता। अतः कृपया इस मामले को आराम से पेश होने दीजिये जिससे कि एक सर्वसम्मत समझौता हो सके।

***उपाध्यक्ष:** परिषद् ने मेरे प्रति इतनी सद्भावना प्रदर्शित की है और मुझ पर ऐसी अनुकम्पा की है तो मैं सुझाव रखता हूं कि मैं डॉक्टर अम्बेडकर को आज उत्तर देने के लिये कहूं, अपितु हम किसी और काम को हाथ में ले लें, ताकि सब सम्बद्ध दलों को आपस में मिल कर किसी सर्वसम्मत हल पर पहुंचने का अवसर मिल सके। आखिर, विधान-निर्माण सहकारी प्रयास है और हमें इसको सफल बनाने के लिये यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये।

***कुछ माननीय सदस्य:** धन्यवाद, श्रीमान्।

अनुच्छेद 63

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 63 को लेते हैं।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 63 को विधान का अंग माना जाये।"

(संशोधन संख्या 1339 और 1340 पेश नहीं किये गये।)

संशोधन संख्या 1341 और 1342 को केवल शाब्दिक संशोधन होने के आधार पर पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती।

संशोधन संख्या 1343, जो श्री आर. वी. थोमस के नाम से है। मुझे पता लगा है कि वे अब इस परिषद् के सदस्य नहीं रहे।

संशोधन संख्या 1344 को, जो मि. नज़ीरुद्दीन के नाम से है, अब पेश किया जा सकता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 63 के खण्ड (4) के स्थान पर निम्न खण्ड रख दिये जायें अर्थात्:

'(4) The Attorney-General shall retire from office upon the resignation of the Prime Minister, but he may continue in office until his successor is appointed or he is re-appointed.

(5) The Attorney-General shall receive such remuneration as the President may determine.'

[(4) अटारनी जनरल (महाप्राभिकर्त्ता) प्रधान मन्त्री के अपने पद से त्यागपत्र देने पर अपने पद से अवकाश प्राप्त कर लेगा, किन्तु जब तक उसका उत्तराधिकारी नियुक्त न हो जाये अथवा वह पुनर्नियुक्त न हो जाये, तब तक वह अपने पद पर रहेगा।

(5) अटारनी जनरल (महाप्राभिकर्त्ता) को उतना वेतन मिलेगा जितना कि प्रधान निश्चित करे।]"

श्रीमान्, मैंने यह संशोधन इसलिये रखा है कि जिससे यह खण्ड प्रान्तीय विधान में उल्लिखित खण्ड के समान बन जाय। परिषद् कृपया खण्ड 145 पर विचार करे। उस खण्ड 145 में प्रत्येक राज्य के लिये एक महाधिवक्ता का प्रावधान है।

मैं ऐसा समझता हूं कि मैं जो कुछ युक्तियां पेश कर रहा हूं उन्हें कम से कम यहां एक सदस्य को अवश्य सुनना चाहिये जिस पर इतना भार है। किन्तु समय बीतने पर तथा अनुभव से एक सदस्य को इस बात के प्रति कुछ उदासीन सा हो जाना पड़ता है कि उसकी वक्तृताओं का परिषद् पर क्या प्रभाव पड़ता है। वास्तव में मैं देखता हूं कि डॉक्टर अम्बेडकर एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण परामर्श में व्यस्त हैं, जिसका विषय इस संशोधन के विषय से कहीं अधिक महत्वपूर्ण होगा, किन्तु मेरे विचार में मेरे लिये यह अनावश्यक अथवा व्यर्थ होगा कि मैं डॉक्टर अम्बेडकर के ध्यान देने तक के लिये ठहरा रहूं, और मेरे ख्याल में मुझे यह भरोसा करके कि परिषद् शायद किसी मौके पर मेरे मत को स्वीकार कर ले, अपने संशोधन पर वक्तृता जारी रखनी चाहिये।

श्रीमान्, अनुच्छेद 145 महाधिवक्ता के विषय में है, जो केन्द्र के महाप्राभिकर्त्ता के समान अधिकारी होगा। अनुच्छेद 145 का खण्ड (1) महाधिवक्ता की नियुक्ति के विषय में है। उसका खण्ड (2) विद्यमान अनुच्छेद के खण्ड (2) के समान है। अनुच्छेद 145 के खण्ड (1) और (2) वास्तव में विद्यमान अनुच्छेद के खण्ड (1) और (2) के समान हैं। अनुच्छेद 145 के खण्ड (3) और (4) वास्तव में महत्त्वपूर्ण हैं। खण्ड (3) में कहा गया है कि "राज्य के मुख्य मन्त्री के पदत्याग पर महाधिवक्ता पद से निवृत्त होगा, पर वह अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति अथवा अपनी पुनर्नियुक्ति होने तक पदासीन रह सकेगा।" खण्ड (4) में प्रावधान है कि "महाधिवक्ता को वे परितोषण दिये जायेंगे जो गवर्नर निश्चित करे।" इन दोनों खण्डों में जो प्रावधान हैं वे अनुच्छेद 63 में दिखाई नहीं देते। मेरा निवेदन है, श्रीमान्, कि इन दो अनुच्छेदों 63 और

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

145 के प्रावधान एकविध होने चाहियें क्योंकि वे दोनों अनुच्छेद दो समवर्त्ती पदों के विषय में हैं एक तो भारत के महाप्राभिकर्त्ता के बारे में और दूसरा राज्य के महाधिवक्ता के बारे में। इस संशोधन द्वारा मैं जो सिद्धान्त रखना चाहता हूं वह यह है कि भारत के महाप्राभिकर्त्ता और प्रान्तों के महाधिवक्ता की एक ही स्थिति होनी चाहिये। वास्तव में प्रान्तों में महाधिवक्ता मन्त्रिमण्डल का ऐसा अंग होगा कि मन्त्रिमण्डल के पतन अथवा त्यागपत्र की अवस्था में उसे भी अपने पद से अलग होना होगा। यही सिद्धान्त यूनाइटेड किंगडम में है जहां मन्त्रिमण्डल के अलग होते ही महाप्राभिकर्ता को भी स्वत: अलग हो जाना पड़ता है। यह सिद्धान्त कि महाधिवक्ता मन्त्रिमण्डल का अंग होता है और मन्त्रिमण्डल के बनने या बिगड़ने पर वह भी बन या बिगड़ जाता है एक अच्छा सिद्धान्त है। यह भी जरूरी है कि महाधिवक्ता को तब तक कार्यासीन रहना चाहिये जब तक कि उसकी पुनर्नियुक्ति न हो जाये अथवा उसका उत्तराधिकारी नियुक्त न हो जाये, क्योंकि प्रतिदिन के कार्य को गवर्नर अथवा अन्य कोई अधिकारी नहीं चला सकता। महाप्राभिकर्ता एक विशेषज्ञ होता है, अत: उसका अपने पद पर आसीन रहना वांछनीय है, और उसे वह वेतन मिलना चाहिये जो कि गवर्नर निश्चित करे। मेरा निवेदन है कि ऐसा ही सिद्धान्त महाप्राभिकर्त्ता के विषय में लागू होना चाहिये। वास्तव में वह भी सरकार का ऐसा अंग होना चाहिये कि मन्त्रिमण्डल के पदनिवृत्त होने पर वह भी पदनिवृत्त हो जाये। कोई कारण नहीं है कि भारत के महाप्राभिकर्त्ता और राज्य के महाधिवक्ता में कोई अन्तर किया जाये। हो सकता है, मैं कह नहीं सकता, कि शायद यह अन्तर जानबूझ कर न रखा गया हो। शायद अनजाने ही यह त्रुटि रह गई हो तथा सोची-समझी हुई नीति के परिणामस्वरूप यह अन्तर न रखा गया हो। इसी कारण मैंने परिषद् का ध्यान इस अन्तर की ओर आकृष्ट करने का प्रयत्न किया है और मेरा सुझाव है कि इस अन्तर को मिटा दिया जाये। क्योंकि कई माननीय सदस्यों को इन दो अनुच्छेदों के बीच के अन्तर पर व्यक्तिगत रूप से सोचने का अवसर शायद न मिला हो, अत: मैंने इस अन्तर को बता दिया है और मुझे आशा है कि वे इस विषय पर उचित रूप से विचार करेंगे।

***प्रोफेसर के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं सविनय निवेदन करता हूं:

"कि अनुच्छेद 63 के खण्ड (4) में 'जो प्रधान' इन शब्दों के स्थान पर 'जो संसद विधि द्वारा' ये शब्द रख दिये जायें।"

यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया, तो अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"महाप्राभिकर्त्ता प्रधान के प्रसाद-काल तक पदासीन रहेगा और उसको वे परितोषण दिये जायेंगे जो संसद् विधि द्वारा निश्चित करे।"

मैं तो इस अनुच्छेद के उस प्रावधान को भी पसंद नहीं करता जिसके अनुसार महाप्राभिकर्त्ता प्रधान के इच्छा-काल तक पदासीन रहेगा। किन्तु हो सकता है कि कोई परम्परा ऐसी बन जाये जिससे कि महाप्राभिकर्त्ता, जैसा कि पिछले संशोधन में कहा गया है, मन्त्रिमण्डल का अंग हो जाये, और वह मन्त्रिमण्डल के साथ ही पद-निवृत्त अथवा पदासीन हुआ करे। यदि विधान में स्पष्टत: इसके विपरीत प्रावधान न हो, तो ऐसी परम्परा के विकसित होने में कोई बाधा न होगी और महाप्राभिकर्त्ता सरकार का मुख्य कानूनी परामर्शदाता हो जाये, जिससे कि उसका पद पारिभाषिक रूप से प्रधान की इच्छा पर निर्भर रहेगा।

जहां तक उसके वेतन आदि का सम्बन्ध है, यदि उसके वेतन का निश्चय प्रधान के आदेश द्वारा न होने दिया जाये, प्रत्युत मन्त्रियों के समान संसद् के कानून द्वारा होने दिया जाये, तो अच्छा हो। यह सच है कि प्रधान मन्त्रियों के परामर्श से कार्य करेगा; किन्तु फिर भी मेरे विचार में उसके वेतन और भत्तों का निश्चय, मेरे ख्याल में, संसद् के कानून द्वारा होना चाहिये, और इसीलिये किसी व्यक्ति के उस पद पर आसीन रहने के काल में उस पर विपरीत प्रभाव डालते हुए उसके वेतनादि में परिवर्तन भी नहीं होना चाहिये। मेरे विचार में इसका आधार सर्वथा स्पष्ट है और मुझे आशा है कि यह संशोधन परिषद् को पसंद आ जायेगा।

***श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, मैं मि. नज़ीरुद्दीन अहमद और प्रोफेसर के.टी. शाह द्वारा पेश किये हुए संशोधनों का विरोध करना चाहता हूं। जिस रूप में अनुच्छेद है उसी रूप में परिषद् द्वारा यह स्वीकृत हो जाना चाहिये। किसी प्रान्त के महाधिवक्ता और भारत के महाप्राभिकर्त्ता में अवश्य अन्तर है। उपखण्ड (4) में प्रावधान है कि महाप्राभिकर्त्ता प्रधान के इच्छा काल तक पदासीन रहेगा और मेरे विचार में यही काफी है। यदि मन्त्रिमण्डल में कोई परिवर्तन हो जाये, तो इसका मतलब यह नहीं होना चाहिये कि महाप्राभिकर्त्ता भी पद-निवृत्त हो जाये, किन्तु प्रान्तों में मन्त्रिमण्डल के परिवर्तन के साथ ही महाधिवक्ता को पद से निवृत्त कर देना चाहिये जब तक कि वह पुनर्नियुक्त न कर दिया जाये। अत: मैं इन संशोधनों का विरोध करता हूं

[श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका]

और विद्यमान रूप में इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***उपाध्यक्षः** डॉक्टर अम्बेडकर!

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** उन्होंने सुना ही नहीं है। वे तो, श्रीमान्, अपने लिये आदेश प्राप्त कर रहे हैं।

***उपाध्यक्षः** यह तो आपने कोई उदारतायुक्त बात नहीं कही है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** नहीं कही है! मुझे बाध्य हो कर यह बात कहनी पड़ी है, श्रीमान्...

***उपाध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य कृपा करके अपने स्थान पर बैठ जायेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): मैं नहीं जानता कि उत्तर की आवश्यकता भी है अथवा नहीं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** नहीं, बिल्कुल नहीं! संशोधन पर कोई बहस ही नहीं हुई है। बिना उत्तर के परिषद् से मत देने के लिये कहना उसके साथ अन्याय होगा। संशोधन पर बिना विचार किये मत लेने की बजाय तो मैं परिषद् से निवेदन करता हूं कि मुझे वह वापस ले लेने दिया जाय।

***उपाध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य को परिषद् की ओर से अनुमति है कि वे अपना संशोधन संख्या 1344 वापस ले लें?

***कुछ माननीय सदस्यः** नहीं।

***उपाध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (4) के स्थान पर निम्न खण्ड रख दिया जाये, अर्थात्:

'(4) The Attorney-General shall retire from office upon the resignation of the Prime Minister, but he may continue in office until his successor is appointed or he is re-appointed.

(5) The Attorney-General shall receive such remuneration as the President may determine.'

[(4) अटारनी जनरल (महाप्राभिकर्त्ता) प्रधान मन्त्री के अपने पद से त्यागपत्र देने पर अपने पद से अवकाश प्राप्त कर लेगा, किन्तु जब तक उसका उत्तराधिकारी नियुक्त न हो जाये अथवा वह पुनर्नियुक्त न हो जाये, तब तक वह अपने पद पर रहेगा।

(5) अटारनी जनरल (महाप्राभिकर्त्ता) को उतना वेतन मिलेगा जितना कि प्रधान निश्चित करे।]"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 63 के खण्ड (4) में 'जो प्रधान' इन शब्दों के स्थान पर 'जो संसद् विधि द्वारा' ये शब्द रख रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 63 विधान का भाग हो।"

संशोधन स्वीकर कर लिया गया।

अनुच्छेद 63 विधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 64

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 64 को लेते हैं। परिषद् के समक्ष प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 64 विधान का भाग हो।"

प्रोफेसर के.टी. शाह के नाम से दो संशोधन (1346 और 1348) हैं। वे उन्हें एक-एक करके पेश कर सकते हैं।

*__प्रोफेसर के.टी. शाहः__ श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 64 के खण्ड (1) में 'प्रधान' शब्द के स्थान पर 'भारत सरकार' ये शब्द रख दिये जायें और,

"कि अनुच्छेद 64 के खण्ड (2) में 'प्रधान' के स्थान में, जहां वह पहली बार प्रयुक्त हुआ हो, 'भारत सरकार' शब्द, प्रधान के स्थान में, जहां वह दूसरी बार प्रयुक्त हुआ हो, 'मन्त्रिपरिषद्' और 'प्रधान' शब्द के स्थान पर, जहां वह तीसरी बार प्रयुक्त हुआ हो, 'भारत सरकार' शब्द क्रमशः रख दिये जायें और खण्ड (2) के अन्त में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that nothing in this article shall invalidate any act or word of Government expressed in the name of a particular Department or Ministry.'

(परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से सरकार को कोई कार्य या वचन जो किसी विभाग अथवा मन्त्रालय के नाम से अभिव्यक्त हो अवैध नहीं होगा।)"

इसके बाद संशोधित अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"'All executive action of the Government of India shall be expressed to be taken in the name of the Government of India.

Orders and other instruments made and executed in the name of the Government of India shall be authenticated in such manner as may be specified in rules to be made by the Council of Ministers, and the validity of an order or instrument which is so authenticated shall not be called in question on the ground that it is not an order or instrument made or executed by the Government of India :

Provided that nothing in this article shall invalidate any act or word of Government expressed in the name of a particular Department or Ministry."

(भारत-शासन की समस्त कार्यवाही भारत-शासन के नाम से की गई कही जायेगी।

भारत-शासन के नाम से दत्त और निष्पादित आदेशों तथा अन्य विलेखों का प्रमाणीकरण उस रीति से किया जायेगा जो मन्त्रिपरिषद् द्वारा बनाये

जाने वाले नियमों में उल्लिखित हो, तथा इस प्रकार प्रमाणीकृत आदेश अथवा विलेख की मान्यता पर कोई आपत्ति इस आधार पर न की जायेगी कि वह भारत-शासन द्वारा दत्त अथवा निष्पादित आदेश अथवा विलेख नहीं है:

परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से सरकार का कोई या वचन जो किसी विभाग अथवा मन्त्रालय के नाम से अभिव्यक्त हो अवैध नहीं होगा।)

यह मानते हुए भी कि प्रधान शासन का प्रमुख होगा, मैं यह नहीं समझ पाता कि सारा शासन-कार्य प्रधान के नाम में क्यों किया जाये और सारे आदेश उसके नाम से क्यों जारी किये जायें। यदि आप इंग्लिस्तान की परम्परा पर भी चलें, तब भी इंग्लिस्तान की सरकार के आदेश आदि 'सम्राट् की सरकार' द्वारा दिये जाते हैं। नि:संदेह भारत में यह स्थिति नहीं है—और कम से कम मैं तो यही उम्मीद करता हूं कि यह अभिप्राय कदापि नहीं होगा कि आगे चल कर भारतीय सरकार को 'प्रधान की सरकार' कहा जाये। हमारी सरकार तो 'भारत सरकार' के नाम से ही ज्ञात रहेगी। मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि 'भारत सरकार' के स्थान पर, जो कि एक अवैयक्तिक एवं सामूहिक रूप का शब्द है, क्यों 'प्रधान' शब्द रखा जाये जो कि वैयक्तिक है। यदि विधान को मैंने ठीक समझा है तो मैं कह सकता हूं कि यह बात उस प्रत्येक सिद्धान्त के विपरीत है जिस पर कि यह विधान अन्यथा आधारित है और मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि अधिशासी क्षेत्र में भारत सरकार के निर्णयों को प्रधान के नाम से क्यों अभिव्यक्त किया जाये। विधान में रखे गये एक स्पष्ट प्रावधान के अनुसार प्रधान दलों के झगड़ों से परे है, पर भारत-सरकार तो निश्चय ही एक दलीय सरकर होगी अथवा मिश्रित सरकार होगी जिसका भाग्य परिवर्तनशील हो सकता है। यदि ऐसा है तो यह सुझाव सर्वथा समुचित है कि सरकार के आदेश सामूहिक रूप से सरकार के नाम में होने चाहियें और प्रधान के नाम में नहीं। इसी कारण प्रथम संशोधन का सुझाव दिया गया है।

दूसरा संशोधन तो प्रथम के फलस्वरूप ही है। आदेशों के निर्माण और जारी करने का विनियमन करने के लिये जो नियम बनाये जायेंगे उन्हें आखिर मन्त्रि-परिषद् ही तो बनायेगी। अत: प्रधान को इस दिशा में जरा भी हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये, और आदेश भारत सरकार के नाम से होने चाहियें। यदि किसी अवसर पर किसी विभाग को कोई परिपत्र अथवा अध्यादेश अथवा कोई विशेष आदेश निकालना ही पड़े जो कि उस विभाग विशेष के कार्य से सम्बन्धित हो, और वह

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

आदेश विशेष उस विभाग अथवा मन्त्रालय के नाम से अभिव्यक्त किया गया हो, तो वह आदेश केवल इसी कारण अवैध न हो जायेगा कि वह भारत-शासन के नाम से अभिव्यक्त है। मुझे तो यह कार्य-प्रणाली अधिक सरल ही नहीं, वरन् विधान के सिद्धान्त के अधिक अनुकूल भी दिखाई देती है, और इसलिये मुझे आशा है कि परिषद् इसे स्वीकार कर लेगी।

(संशोधन संख्या 1347 पेश नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** अब इस अनुच्छेद पर विस्तृत रूप से वाद-विवाद किया जा सकता है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, प्रोफेसर के. टी. शाह ने संशोधन संख्या 1346 और 1348 को पेश किया है और उन्होंने अपने सब संशोधन एक भिन्न योजना के अनुसार, जिसे कि उन्होंने बताया है, पेश किये हैं; और इस योजना के अनुसार ही उन्होंने इस विधान के प्रत्येक खण्ड पर अथवा अधिकांश खण्डों पर संशोधन भेजे हैं। वे इस देश में एक भिन्न प्रकार का शासन अर्थात् प्रधानात्मक व्यवस्था चाहते थे जो संसदात्मक व्यवस्था के विपरीत होती है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** एक भूल सुधार दूं। मैं तो यह चाहता था कि अपने प्रधान को प्रधानात्मक व्यवस्था से पृथक् रखा जाये। मैं तो उनके मसौदे पर ही संशोधन करना चाहता था।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मुझे प्रसन्नता है कि इस बार तो मेरे मित्र ने दूसरे पक्ष की सहायता करने का प्रयत्न किया है। मेरे मित्र प्रोफेसर शाह देखेंगे कि हमने अनुच्छेद 66 के लिये पहले ही अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी है, जिसमें कहा गया है कि:

> "There shall be a Parliament for the Union which shall consist of the President and two Houses to be known respectively as the Council of States and the House of the People"
>
> (संघ के लिये एक संसद् होगी जो प्रधान और दो आगारों की बनेगी जिनके नाम क्रमश: राज्य-परिषद् और लोक-सभा होंगे।)

अत: संघ का प्रधान भारतीय संघ की संसद् का आन्तरिक भाग बन जाता है। दूसरी धारा के अनुसार कार्यकारिणी शक्ति का विधान-मण्डल की शक्तियों

के साथ सह-विस्तार है। इसलिये एक स्थान पर तो वह अपेक्षित तत्त्व बन जाते हैं और दूसरे स्थान पर वह दिन-प्रतिदिन के प्रशासकीय कोलाहल से परे हो जाता है। प्रोफेसर शाह अनुच्छेद 66 में एक संशोधन द्वारा चाहते थे कि प्रधान को हटा दिया जाये तथा दो सदन ही रह जायें—वे तो एक ही सदन चाहते थे। किन्तु उनका संशोधन गिर गया और प्रधान एक स्थायी अंग बन गया। जहां तक संसद् का प्रश्न है, मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि कार्यकारिणी शक्ति का निर्वाहन उनके नाम से क्यों न हो।

हम अनुच्छेद 42 को लें। उसमें कहा गया है:

"The executive power of the Union shall be vested in the President and may be exercised by him in accordance with the Constitution and the law.

(संघ की अधिशासी शक्ति प्रधान में निहित होगी और वह इसका प्रयोग संविधान तथा विधि के अनुसार कर सकेगा।)"

वह भी इस परिषद् द्वारा पारित किया गया था। अनुच्छेद 42 और 66 के अनुसार, जिनमें पहले के अनुसार प्रधान कार्यपालक प्राधिकारी होगा और दूसरे के अनुसार वह दोनों सदनों के साथ मिल कर संसद् का निर्माण करेगा, प्रधान को दोनों स्थानों पर दृढ़रूपेण बैठा दिया गया है। इस अनुच्छेद अर्थात् अनुच्छेद 64 द्वारा तो अनुच्छेद 42 और 66 के वास्तविक प्रावधानों को पूरा किया जा रहा है क्योंकि इसमें यह कहा जा रहा है कि:

"भारत-शासन की समस्त अधिशासी कार्यवाही प्रधान के नाम से की गई कही जायेगी।"

वह प्रमुख कार्यपालक प्राधिकारी होगा। वह प्रथम व्यक्ति होगा और संसद् के विलयन का प्रश्न हो, तो कौन ऐसा व्यक्ति है जो उसका विलयन कर सकेगा? प्रधान ही ऐसा व्यक्ति है जिसे यह अधिकार दिया गया है। दिन-प्रतिदिन के प्रशासन-कार्य में विधायक कार्यों और कानूनों के निर्माण के अतिरिक्त शेष कार्यों में मन्त्रियों की अनुपस्थिति में कौन हस्ताक्षर करेगा? यदि संसद् का विलयन हो जाये तो मन्त्रिमण्डल का भी विलयन हो जायेगा। यदि उस प्रकार का कोई अवसर आ जाये तो प्रधान को ही उन शक्तियों का निर्वाहन करना होगा।

अब हम दूसरे तर्क पर भी विचार करें जो पेश किया गया है। मेरे मित्र प्रोफेसर शाह चाहते हैं कि अधिशासी कार्य को सरकार के नाम से किया गया

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

कहा जाना चाहिये। प्रधान का अर्थ है मन्त्रियों की मन्त्रणा पर चलने वाला प्रधान। वह स्वतन्त्ररूपेण कार्य नहीं कर सकता। कार्यवाही उसके नाम से की जाती है यद्यपि वह समस्त सरकार की कार्यवाही होती है। इसलिये इस ढांचे से बाहर निकलना असम्भव है। प्रधान प्रमुख कार्यपालक प्राधिकारी होता है और वह संसद् में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी होता है। अत: स्वभावत: यह परिणाम निकलता है कि कार्यकारिणी कार्यवाही प्रधान के नाम से की गई कही जानी चाहिये।

मैं प्रोफेसर शाह के दोनों संशोधनों—संख्या 1346 और 1348—का विरोध करता हूं और परिषद् से प्रार्थना करता हूं कि अनुच्छेद 64 को वर्तमान रूप में ही स्वीकार कर लिया जाये।

*__श्री राजबहादुर__ (संयुक्त राज्य मत्स्य): उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रोफेसर के. टी. शाह द्वारा पेश किये गये संशोधन का विरोध करने के लिये ही यहां आया हूं। वे समय समय पर जो बहुत से संशोधन पेश करते रहे हैं, उनसे मेरा यह ख्याल हो गया है कि वे एक निश्चित योजना के अनुसार प्रस्ताव कर रहे हैं और वे इस देश के लिये जनतंत्र की संसदात्मक प्रणाली के स्थान पर प्रधानात्मक प्रणाली का विधान चाहते हैं। किन्तु, उनके पांडित्य और अनुभव का आदर करते हुए भी, मैं देखता हूं कि उसमें भी वह सामंजस्य नहीं रखते हैं। जब हमने अनुच्छेद 42 पर विचार किया जिसके अनुसार संघ की समस्त अधिशासी शक्ति प्रधान में निहित होगी, तब उन्होंने स्वयं उस अनुच्छेद पर दो संशोधन संख्या 1040 और 1045 पेश किये थे और उनका एक संशोधन यह था:

"The sovereign executive power and authority of the Union shall be vested in the President, *and shall be exercised by him* in accordance with the Constitution and in accordance with the laws made thereunder and in force for the time being."

(संघ की सार्वभौमिक अधिशासी शक्ति और प्राधिकार प्रधान में निहित होंगे और उनका प्रयोग विधान के अनुसार तथा उसके अन्तर्गत निर्मित तथा संप्रति चलन में जो कानून होंगे उनके अनुसार करेगा।)

इसका यह स्पष्ट फलितार्थ है कि सारे अधिशासी कार्य प्रधान द्वारा और उसके नाम में किये हुए कहे जाने चाहियें और विचाराधीन अनुच्छेद 64 का भी ठीक यही आशय, अर्थ तथा फलितार्थ है। अत: मैं समझ नहीं पाता कि प्रोफेसर के.टी. शाह अपने संशोधन की शर्तों से क्यों अब विमुख हो रहे हैं जिन्हें उन्होंने अनुच्छेद 42 पर पेश किया था। हमारा तो स्पष्टतया यही आशय है कि संघ की

समस्त अधिशासी शक्ति प्रधान में निहित होनी चाहिये और सारे सरकारी अदेश तथा निर्देश प्रधान के नाम पर जारी होंगे। प्रधान के नाम में आदेश जारी करने में किसी ज्ञात जनतंत्रात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत कोई परस्पर वैपरीत्य अथवा असामंजस्य नहीं है, और इसलिये, मेरा निवेदन है, कि प्रोफेसर शाह के संशोधन को स्वीकार करने का परिषद् के लिये कोई कारण नहीं है।

***माननीय डॉक्टर बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष महोदय, मेरे विचार में उत्तर की कोई आवश्यकता नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 64 के खण्ड (1) में 'प्रधान' शब्द के स्थान पर 'जो संसद् विधि द्वारा' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है :

"कि अनुच्छेद 64 के खण्ड (2) में 'प्रधान' के स्थान में, जहां वह पहली बार प्रयुक्त हुआ हो, 'भारत सरकार' शब्द, प्रधान के स्थान में, जहां वह दूसरी बार प्रयुक्त हुआ हो, 'मन्त्रिपरिषद्' और 'प्रधान' शब्द के स्थान पर जहां वह तीसरी बार प्रयुक्त हुआ हो, 'भारत सरकार' शब्द क्रमश रख दिये जायें और खण्ड 2 के अन्त में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that nothing in this article shall invalidate any act or hord of Government expressed in name of a particular Department or Ministry.'

(परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से सरकार को कोई कार्य या वचन जो किसी विभाग अथवा मन्त्रालय के नाम से अभिव्यक्त हो अवैध नहीं होगा।)"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 64 विधान का भाग हो।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 64 विधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 65

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1349 का तो नकारात्मक प्रभाव है, अत: उसे पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती।

संशोधन संख्या 1350 श्री एच.वी. कामत के नाम में है और पेश किया जा सकता है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं, श्रीमान्:

"कि अनुच्छेद 65 के खण्ड (क) में 'President' शब्द के पश्चात् एक कामा (अर्ध-विराम) तथा 'as soon as they are made' ये शब्द रख दिये जायें। (हिन्दी अनुवाद में 'प्रधान' शब्द के पूर्व 'ज्यों ही वे किये जायें' ये शब्द रखे जायें।)"

वर्तमान रूप में खण्ड इस प्रकार है:

"प्रधान मन्त्री का कर्त्तव्य होगा–

'संघ के प्रशासन सम्बन्धी मन्त्रिपरिषद् के समस्त निर्णय, प्रधान को पहुंचाना.....।' "

यदि मेरा संशोधन परिषद् स्वीकार कर ले तो संशोधित रूप में खण्ड इस प्रकार हो जायेगा:

"It shall be the duty of the Prime Minister—

to communicate to the President, as soon as they are made, all decisions of the Council of Ministers."

(प्रधान मन्त्री का कर्त्तव्य होगा–

'संघ के प्रशासन सम्बन्धी मन्त्रिपरिषद् के समस्त निर्णय, ज्यों ही वे किये जायें, प्रधान को पहुंचाना।')

यह संशोधन महज रस्म के तौर पर ही है और इससे तो खण्ड के अर्थ में स्पष्टता आ जायेगी। मेरे विवेकानुसार विधान में ऐसे खण्ड की कोई आवश्यकता नहीं है, और मेरे विचार में इसे मन्त्रिमण्डल के कार्य-नियमों में ही रखा जा सकता है। किन्तु किसी तरह यह चीज़ विधान में आ गई है और कोई संशोधन जो इसे हटाने के लिये है उसकी अनुमति नहीं दी जायेगी, क्योंकि यह प्रस्ताव

का निराकरण करता है। व्यक्तिगत रूप से मैं यह चाहता था कि यह सारा अनुच्छेद होता ही नहीं, क्योंकि यह तो मन्त्रिमण्डल के कार्य-नियमों का ही एक नियम है; और इस विषय में केवल इतना ही करना चाहिये था कि इसे मन्त्रिपरिषद् के कार्य-नियमों में रख दिया जाता। किन्तु क्योंकि यह हमारे समक्ष पेश हुआ है तो मैं यहां संशोधन पेश करना चाहता हूं ताकि इस उपखण्ड (क) के विषय में और स्पष्टीकरण हो जाये, क्योंकि यदि मन्त्रिपरिषद् के निर्णयों को, ज्यों ही वे किये जायें, तुरन्त ही प्रधान के पास पहुंचाना चाहिये,—हां, हो सकता है कि वे उसके पश्चात् तुरन्त ही पहुंचा दिये जायेंगे,–किन्तु इसे पूर्णतः स्पष्ट करने के लिये हम इसके बारे में प्रावधान भी कर सकते हैं कि मन्त्रिमण्डल के सब निर्णयों को, ज्यों ही वे किये जायें, प्रधान के पास पहुंचाना चाहिये। इससे यह होगा कि यदि कोई ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाये, जैसी कि उपखण्ड (ख) और (ग) में कल्पना की गई है, तो प्रधान विवरण मांग सकता है और यदि प्रधान कहे तो किसी विषय पर, जिस पर पहले ही मन्त्रिमण्डल में निर्णय हो चुका हो, फिर विचार किया जा सकता है, जैसा कि इस अनुच्छेद के उपखण्ड (ग) में लिखा है। अन्य मामलों के समान इस मामले में भी विलम्ब भयावह हो सकता है और इसलिये इस विषय में किसी भी विलम्ब को हटाने के उद्देश्य से किसी टालमटोल को हटाने के लिये मैं प्रस्ताव करता हूं, श्रीमान्, कि मन्त्रिमण्डल के निर्णयों को, ज्यों ही वे किये जायें, प्रधान के पास पहुंचा देना चाहिये। मैं संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1350 को पेश करता हूं और परिषद् से इसको स्वीकार करने के लिये अनुरोध करता हूं।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन पर एक संशोधन है जो पंचम सूची (षष्ठ सप्ताह) का संशोधन संख्या 71 है और श्री आर.के. सिधवा के नाम में है, जो परिषद् में नहीं है।

तत्पश्चात् हम संशोधन संख्या 1351 को लेते हैं जो श्री ए. के. मैनन और श्री बी. एम. गुप्त के नाम में है।

(संशोधन पेश नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 1352 प्रोफेसर के. टी. शाह के नाम में है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह :** यह तो विस्तार का विषय है और मैं चाहता हूं कि इस संशोधन को पेश करने के विषय में मुझे क्षमा किया जाये।

***उपाध्यक्षः** इस समय परिषद् के समक्ष केवल एक संशोधन रह गया है और अब इस खंड पर व्यापक वाद-विवाद हो सकता है। डॉक्टर अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना पसंद करेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** नहीं श्रीमान्, मैं श्री कामत के संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 65 के खण्ड (क) में 'President' शब्द के पश्चात् एक कामा (अर्धविराम) तथा 'as soon as they are made' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 65 विधान का भाग हो।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 65 विधान में जोड़ दिया गया।

***उपाध्यक्ष:** साधारणतया हम अपने मुस्लिम भाइयों की सुविधा के हेतु 1 बजे कार्य समाप्त करते है। आज हम अपनी सुविधा के लिये अभी समाप्त कर देते हैं। परिषद् कल प्रात: के दस बजे तक के लिये स्थगित होती है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** क्या मैं आपसे प्रार्थना कर सकता हूं, श्रीमान्....

***उपाध्यक्ष:** परिषद् स्थगित हो गई है, अब कोई कार्य नहीं हो सकता।

तत्पश्चात् परिषद् शनिवार, 8 जनवरी, 1949 को प्रात: के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।